मृच्छकटिक में सामाजिक रीतिरिवाज, उपासना, व्रत, उत्सव एवं मनोरंजन

*डॉ. छगनलाल महोलिया

प्रस्तावना –

मानव का स्वभाव रहा है कि वह दूसरों के सम्पर्क में आये। धीरे–धीरे मनुष्य समुदाय जो भोजन, वस्त्र एवं आचार–विचारों में इस प्रकार पारस्परिक संसर्ग से निरन्तर एक साँचे में ढलता रहा आगे चलकर एक सभ्य समाज के रूप में कहा जाने लगा।

वर्ण–व्यवस्था एवं जातिप्रथा के अनुसार समाज विभिन्न रूपों में बंट गया और उनके रीतिरिवाज भी इस प्रकार पृथक् रूपों में दिखाई देने लगे। ये रीति–रिवाज, भोजन–वस्त्र, रहन–सहन और संस्कारों के रूप में घरेलू जीवन के अंग बन गये।

दैनिक जीवन में मनुष्य इतना व्यस्त रहता है कि अपने सुदूरवर्ती संबंधियों से उसका प्रतिदिन अथवा शीघ्र मिलना–जुलना संभव नहीं हो सकता। अतः आपस के प्रेम को सम्बन्धियों में सुदृढ़ रखने के लिये उत्सवों का प्रचलन हुआ जो ऋतुओं के अनुसार आरम्भ में सम्पादित हुए और जिनके बहाने न केवल उन्हें अपने सम्बन्धियों के यहां आ–जाकर प्रेम–बन्धन को सुदृढ़ रखने का अवसर मिला वरन् निरन्तर एक जैसे दैनिक कार्य करने से भी अवकाश मिला जिसके कारण जीवन में कुछ नवीनता सी प्रतीत हुई। उत्सवों के दिन विशेष आहार होता था और बालक, तरुण, वृद्ध सभी नवीन वस्त्र धारण करते थे। इन उत्सवों का इस भांति समाज में एक विशिष्ट महत्व हो गया।

धार्मिक दृष्टिकोण से देखें तो व्रत, उपवास आज भी उसी काल जैसे चल रहे हैं जिनमें कोई विशेष अन्तर नहीं दिखाई देता। मृच्छकटिक में सूत्रधार और नटी की बातचीत में अभिरूपपति नामक उपवास की चर्चा है जिसके द्वारा अनुकूल पति–प्राप्ति दिखाई गई है।

नटी – अज्ज उपवासी गहिदो।[1]

आज उपवास ग्रहण कया है।

सूत्रधार – किं नामधेओ अअं उपवासो।[2]

इस उपवास का क्या नाम है ?

नटी – अहिरूअवदी णाम।[3]

अभिरूपपति व्रत है।

इसके आगे बलि आदि की भी चर्चा है।

मैत्रेय – एसो चारुदत्तो सिद्धिकिददेवकज्जो गिहदेवदाणं बलिं हरेन्तो इदोज्जेव आअच्छदि।[4] मृ.क. (प्र. अंक)

यह आर्य चारुदत्त गृहदेवताओं की बलि को लिये हुए इधर ही आ रहे हैं। चारुदत्त ने मैत्रेय से फिर बलि की चर्चा की है।

'तद्वयस्य, कृतो मया गृहदेवताभ्यो बलिः। गच्छ। त्वमपि चतुष्पथे मातृभ्यो बलिमुपहर।' मृ.क. (प्र. अंक)

तो मित्र, मैंने गृहदेवताओं को बलि दे दी है। जाओ, तुम भी चौराहे पर मातृदेवियों को बलि भेंट कर दो।

चारुदत्त ने विदूषक से सन्ध्योपासन की भी चर्चा की है।

'भवतु। तिष्ठ तावत्। अहं समाधिं निर्वर्तयामि।' मृ.क. (प्र. अंक)

अच्छा, तब तक ठहरो। मैं समाधि (सन्ध्या) समाप्त करता हूं। सूर्य के अर्ध्य की चर्चा उस समय शर्विलक ने की है जबकि चारुदत्त की दीवार में संधि (सेंध) के लिए वह स्पर्श कर रहा है।

'नित्यादित्यदर्शनोदकसेचनेन दूषितेयं भूमिः क्षारक्षीणा।' मृ.क. (तृ. अंक)

नित्य सूर्यदर्शन के समय जल देने से यह भूमि दूषित है और रेह से जर्जर है।

रत्नषष्ठी का व्रत भी उल्लेखनीय है जिसमें सम्पत्ति के अनुसार ब्राह्मण को दान दिया जाता है। विदूषक को पूर्वाभिमुख करके घूता उसे रत्नावली देती है। घूता कहती है :–

'अहं क्खु रअणसट्टिं उववसिदा आसि। तहिं जधाविहवाणुसारेण बम्हणो पडिग्गाहिदववो। सो अ ण पडिग्गाहिदो, ता तस्स किदे पडिच्छ इमं रअण–मालिअम्।' मृ.क. (तृ. अंक)[5]

मैंने रत्नषष्ठी का व्रत किया था। उसमें सम्पत्ति के अनुसार ब्राह्मण को दान देना चाहिये। उसे दान नहीं दिया गया था, अतः उसके लिए इस रत्नमाला को ग्रहण करो।

पौराणिक देवी–देवताओं की पूजा होती थी। शिव की उपासना मुख्य रूप से की जाती थी।

वसंतसेना के प्रकोष्ठों को देखते हुए विदूषक ने उसकी मोटी माता को महादेव की विशाल मूर्ति के समान बताया है।

'अहो से कवट्टडाइणीए पौट्टवित्थारो। ता किं एदं पवेसिअ महादेवं विअ दुआरसोहा इह घरे णिम्मिदा।'[6] मृ.क. (च. अंक)

हाय इस भद्दी डायन के पेट का विस्तार भी कितना है ! क्या महादेव की विशाल मूर्ति के समान इसकी यहां घर में प्रविष्ट कराकर बाद में द्वार की शोभा को बनाया गया था, क्योंकि वर्तमान द्वार तो इस स्थूल वृद्धा का आना असंभव है।

धार्मिक कार्यों में धनी वर्ग अपनी सम्पत्ति उदारतापूर्वक खर्च करता था। इस सम्बन्ध में चारुदत्त के बिहार, आराम, देवालय, तड़ाग, कूप आदि के निर्माण की चर्चा पहले की जा चुकी है।

इस सम्बन्ध में परांजपे का विचार उल्लेखनीय है, जिसमें गोदान, ब्राह्मण–भोज एवं जनहित के लिये विभिन्न निर्माणों की चर्चा है।

Usavadata's inscription at Nasik, similarly mentions that he (Usavadata) constructed caves, gave away

cows, constructed flights of steps on the banks of rivers, assigned village to gods and Brahmans, fed a hundred, thousand Brahmans every year, made gardens and sank well and tanks, founded benefactions for Charan and Parishad 'the same nations'.

Dr. Bhadarkar observe, as regards these matters prevailed then as now.[7]

समय–समय पर उत्सव भी मनाये जाते थे। ये उत्सव दो प्रकार के होते थे – एक सामान्य और दूसरे विशेष। सामान्य उत्सवों में विवाहादि उत्सव है। चारुदत्त ने दीनता का वर्णन करते हुए धरेलू उत्सव की चर्चा की है और यह दिखाया है कि उसमें सम्मिलित होने वाले दीनों की क्या दशा होती है –

संगं नैव हि कश्चिदस्य कुरुते संभाषते नादरात्,

संप्राप्तो गृहमुत्सवेषु धनिनां सावज्ञमालोक्यते। मृ.क. (1–37)

दरिद्र के पास कोई नहीं बैठता, न कोई उससे आदर से बोलता है। धनी लोगों के घर विवाहादि उत्सवों में गया हुआ वह अनादरपूर्वक देखा जाता है।

पुत्रजन्मोत्सव भी बड़ी धूमधाम से मनाया जाता होगा तभी तो चारुदत्त ने चाण्डालों से कहा है –

न भीतो मरणादस्मि केवलं दूषितं यशः।

विशुद्धस्य हि मे मृत्युः पुत्रजन्मसमो भवेत्।। मृ.क. (10–27)

मैं मृत्यु से भयभीत नहीं हूं किन्तु इसलिए भयभीत है कि मेरी मृत्यु कलंकित हुई है। दोषरहित होकर मेरी मृत्यु हुई होती तो वह पुत्र के जन्म के समान होती।

कामदेवोत्सव और इन्द्रमह विशेष उत्सव थे जो बड़ी सज–धज से मनाये जाते थे। कामदेवोत्सव वसन्तोत्सव के नाम से प्रसिद्ध था जो एक विशेष उद्यान में मनाया जाता था। इसीलिये इस उद्यान का नाम कामदेवायतनोद्यान था जहां कामदेव का मंदिर था। शकार ने वसन्तसेना के सम्बन्ध में इसकी चर्चा की है :

'भावे–भावे, एषा गब्भदासी कामदेवाअदणुज्जाणादो पहुदि ताह दलिद्दचालुदत्ताह अणुलत्ता ण मं कामेदि'।[8]

मृ.क. (प्र. अंक)

भाव भाव यह जन्मदासी कामदेवायतन उद्यान के गमन से लेकर उस दरिद्र चारुदत्त से प्रेम करने लगी है मेरी कामना नहीं करती।

यह उत्सव सम्भवतः वसन्त में बहुत दिनों तक चलता होगा और प्रेमी युवक–युवतियों का इसमें उल्लासपूर्ण मनोरंजन होता होगा।

इन्द्रमह उत्सव देवराज इन्द्र के सम्मान में मनाया जाता था जिसमें बड़े–बड़े झण्डे फहराये जाते थे।

ये सामयिक उत्सव तरुण एवं बालसमाज के लिये मनोरंजन के साधन थे। आजकल की प्रदर्शनी या किसी बड़े मेले के रूप में इनका अनुमान लगाना ठीक होगा। उस समय का जीवन बड़ा व्यस्त प्रतीत होता है जिससे अपने संबंधियों से मिलना भी कभी–कभी विशेष अवसरों पर होता था। पर इन उत्सवों के बहाने परस्पर भेंट होती रहती थी और पारस्परिक प्रेमबन्धन दृढ़ होता रहता था। मनोरंजन का साधन देश–विदेश की यात्रा भी थी।[9] व्यापारियों के लिए यह यात्रा अर्थलाभ का भी साधन थी।

पुलिस अधिकारी चन्दनक को अनेक म्लेच्छ आदि जातियों का ज्ञान था। शर्विलक इस घूमने–फिरने के ही कारण अनेक भाषाओं का ज्ञाता था। उज्जयिनी का वैभव मनोरंजक जीवन का प्रतीक है। यहां के जनसमुदायपूर्ण बड़े–बड़े भवन, दुकानें, उद्यान, द्यूतगृह, मदिरालय एवं यातायात के साधन सभी तो मनोरंजन में सहायक थे। रात्रि के समय मशालों (टार्चों) का प्रयोग होता था।

निष्कर्ष –

मनुष्य का जीवन जब समाज में स्थिर होने लगता है तो उसका ध्यान धार्मिक एवं आर्थिक प्रगति की ओर बढ़ता है। आर्थिक प्रगति तो मृच्छकटिककाल में व्यापार एवं वाणिज्य से हुई और धार्मिक प्रगति के परिचायक तत्कालीन उपासना, व्रत एवं धार्मिक उत्सव रहे।

अभिरूपपति ऐसा ही व्रत है जो पति की शुभकामना का प्रतीक है। रत्न–षष्ठी में भी दान देने की बात कही गयी है। उस समय भी ये व्रत स्त्रियों द्वारा किये गये हैं और आज भी महिलायें इन व्रतों को विशेषतः करती हुई देखी जाती है। व्रतों में उपवास रहता है। निराहार के साथ–साथ यह फलाहार–युक्त भी होते हैं।

***व्याख्याता**
संस्कृत विभाग
श्री रतनलाल कंवरलाल पाटनी राजकीय स्नात्कोत्तर
महाविद्यालय किशनगढ़ (अजमेर)

संदर्भ –

1. अद्योपवासो गृहीतः। (सं.अनु.)
2. किं नामधेयोऽयमुपवासः। (सं.अनु.)
3. अभिरूपपतिर्नाम। (सं.अनु.)
4. एष चारुदत्तः सिद्धीकृतदेवकार्यो गृहदेवतानां बलिं हरन्निव एवागच्छति। (सं.अनु.)
5. अहं खलु रत्नषष्ठीमुपोषितासम्। तत्र यथा विभवानुसारेण ब्राह्मणः प्रतिग्राहितव्यः। स च न प्रतिग्राहितः, तत्तस्य कृते प्रतीच्छेमां रत्नमालिकाम्। (सं.अनु.)
6. अहो अस्याः कपर्दकडाकिन्या उदरविस्तारः। तत्किमेतां प्रवेश्य महादेवमिव द्वारशोभा इह गृहे निर्मिता।(सं.अनु.)
7. Dr. V.G., Paranjpe : Mricchakatika, p. 103 (Appendix)
8. भाव भाव, एषा गर्भदासी कामदेवायतनोद्यानात्प्रभृति तस्व दरिद्र चारुदत्त–स्थानुरक्ता न मां कामयते। (सं.अनु.)
9. Perface to Mrichhakatika, Dr. G.K. Bhat, p. 242-43.